अमरीकी संग्रहालयों एवं निजी संग्रहों में जैन प्रतिमाएं

डा० ब्रजेन्द्रनाथ शर्मा

अब से लगभग ५० वर्ष पूर्व जब सुप्रसिद्ध विद्वान डा. आनंद कुमारस्वामी ने भारतीय कला का सही ढंग से मूल्यांकन संसार के सामने रखा तभी से योरोप एवं अमेरिका के संग्रहालयों एवं अन्य अमीर लोगों में भारतीय कलाकृतियों को प्राप्त करने की होड़ सी लग गई है। इसके फलस्वरूप वहां के संग्रहालयों में अलग-अलग ढंग से भारतीय कक्षों की भी स्थापना हुई जिसमें पाषाण, कांस्य, मृण्मय, काष्ठ, हाथी-दांत की मूर्तियों के अतिरिक्त सुन्दर लघु चित्रों को भी प्रदर्शित किया गया। अमेरिका के लगभग प्रत्येक संग्रहालय में अन्य धर्मों के देवी-देवताओं के साथ साथ जैन तीर्थंकरों एवं यक्ष-यक्षणी आदि की प्रतिमायें भी विद्यमान हैं जो जैन धर्म एवं कला के विद्यार्थियों के अध्ययन के लिये बड़ी उपयोगी हैं। प्रस्तुत लेख में हम ऐसे ही संग्रहालयों एवं वहां के निजी संग्रहों में संग्रहीत कुछ महत्वपूर्ण प्रतिमाओं का संक्षेप में वर्णन करेंगे। बम्बई निवासी श्री नसली हीरामानिक अब से काफी समय पूर्व अमरीका में बस गये थे और वहां उन्होंने देश विदेश की कलाकृतियों का बड़ा अच्छा संग्रह कर लिया। इनकी पत्नी श्रीमती एलिस मानिक को भी अपने पति के साथ प्राचीन कलाकृतियों के संग्रह में रुचि थी। इनके संग्रह में तीन जैन मूर्तियां हैं जिनका उचित स्थान पर वर्णन करेंगे। इनमें सबसे महत्वपूर्ण मूर्ति तेवीसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की है। धातु की ९ वीं शती ई० की यह कलात्मक मूर्ति गुजरात में अकोटा से प्राप्त समकालीन मूर्तियों से काफी साम्यता रखती है। प्रस्तुत मूर्ति में पार्श्वनाथ को एक सुन्दर सिंहासन पर ध्यान मुद्रा में बैठे दिखाया गया है। इनके शीष के ऊपर बने सर्प के सात फणों में से अब केवल तीन ही शेष बचे हैं। अन्य चार टूट गये हैं पार्श्वनाथ के वक्ष पर श्री वत्स चिन्ह है। इस त्रितीर्थी में मुख्य मूर्ति के दोनों ओर सम्भवतः महावीर एंव आदिनाथ की छत्र के नीचे कायोत्सर्ग मुद्रा में प्रतिमायें हैं और प्रत्येक के पीछे सुन्दर प्रभा-मण्डल है। सिंहासन की दाहिनी ओर यक्ष सर्वानुभूति की गजारूढ़ एंव बाईं ओर यक्षिणी अम्बिका के दाहिने हाथ में आम्र लुम्बी है और वह बाएं हाथ से गोद में लिए बालक को पकड़े हुए है। सिंहासन पर सामने धर्म चक्र के दोनों ओर एक-एक मृग बैठे दिखाए गए हैं और किनारों पर चार-चार ग्रहों का अंकन है। इसी से साम्य रखती एक मूर्ति बम्बई के प्रिन्स आफ वेल्स संग्रहालय में प्रदर्शित है (नं. ६७०८)।

पार्श्वनाथ की एक अत्यन्त कलात्मक मूर्ति एवरी ब्रन्डेज संग्रह में भी स्थित है। इसमें वह सात फणों के नीचे जिनके ऊपर त्रिक्षत्र बना है, एक पद्मासन पर कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े हैं। प्रशांत मुद्रा, लम्बे कान, आजानुबाहु आदि विशेषताओं जिनका वराहमिहिर ने अपनी "वृहत्संहिता' में उल्लेख किया है, को कलाकार ने बड़ी सजीवता से दर्शाया है। नग्न होने के कारण प्रतिमा दिगम्बर सम्प्रदाय की प्रतीत होती है। मूलमूर्ति के पैरों के समीप एक एक चंवरधारी सेवक तथा उनके ऊपर गज शार्दूल बने हैं। जिनके शीष के दोनों ओर एक-एक हंस व बादलों में उड़ते मालाधारी गन्धर्व प्रदर्शित किए गए हैं। मूर्ति की पीठिका पर कमल नाल के पास नाग व नागी, उपासक तथा नेवैद्य आदि का भी चित्रण है। यह मूर्ति बिहार में पाल शासकों के समय ११ वी शती ई० में बनी प्रतीत होती है।

क्लीवलेण्ड म्युजियम आफ आर्ट में पार्श्वनाथ की एक दुर्लभ मूर्ति प्रदर्शित है। मध्य भारत में लगभग १० वीं शती में निर्मित इस मूर्ति में कमठ अपने साथियों सहित पार्श्वनाथ पर आक्रमण करता दिखाया गया है। प्राचीन जैन ग्रंथों में वर्णित कथा के अनुसार जब पार्श्वनाथ संसार त्यागने के बाद तपस्या में लीन थे तब कमठ ने उन्हें तपस्या करने पर अनेक प्रकार की बाधाएं डाली, उसने उन पर पर्वत शिलाएं फैंकी, घोर वर्षा करी तथा सिंह, बिच्छू

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बेताल आदि से भी डरवाने का प्रयत्न किया। परन्तु वह घोर तपस्या में अडिग रहे। अतः बाद में कमठ ने लज्जित होकर क्षमा याचना की। इस प्रकार की अन्य प्रतिमायें प्रायः दुलर्भ हैं। विहार से मिली एक ऐसी मूर्ति विक्टोरिया एण्ड अल्बर्ट संग्रहालय लंदन तथा अर्थूणा से मिली, अजमेर संग्रहालय में प्रदर्शित है। बादामी तथा अलोरा में भी ऐसी अन्य मूर्तियां अभी भी देखी जा सकती हैं।

क्लीवलैण्ड संग्रहालय की इस आदमकद मूर्ति (नं० ६१, ४१९) में नग्न पार्श्वनाथ कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े हैं। इसमें इनके शीर्ष पर बने बड़े सर्प फणों के ऊपर गन्धर्व युग्म, शंख वादक व मालाधारी दिव्य बने हैं। मूर्ति के दोनों ओर धरणेन्द्र-नाग की रानियों अर्थात् नागिनों के चित्रण हैं जब कि जिनके शीर्ष के ऊपर स्वयं वह फण फैलाए कमठ द्वारा की जाने वाली वर्षा तथा पत्थरों से तीर्थंकर की रक्षा कर रहा है। तीर्थंकर की मूर्ति के समीप चंवरधारी सेवक तथा चार अन्य नागियों का सुन्दर अंकन किया गया है।

श्री जैसन बी. ग्रोसमेन के संग्रह में बलुए पत्थर का बना एक बड़ा सुन्दर जिन मूर्ति का सिर है। इसमें उनके घुंघराले केशों को बड़ी सुन्दरता से दर्शाया गया है। प्रस्तुत शीर्ष में माथे पर मंगलकारी चिह्न बना है, परन्तु अन्य विशेषताओं के अभाव में किसी विशेष तीर्थंकर मूर्ति से इसका संबंध बताना कठिन कार्य है। यह शीर्ष राजस्थान की लगभग १० वीं शती ई. कला का उदाहरण माना जा सकता है।

उपर्युक्त शीर्ष की लगभग समकालीन एक तीर्थंकर प्रस्तर प्रतिमा श्रीमती एवं श्री हेरी लेनार्ट के संग्रह में भी है। इसमें तीर्थंकर ध्यान मुद्रा में एक सिंहासन पर विराजमान हैं। मूर्ति के वक्ष पर श्री वत्स चिह्न बना है परन्तु उनका लांछन खण्डित हो जाने के कारण उनकी ठीक पहचान करना कठिन है। मूर्ति के बांई ओर एक चंवर पकड़े सेवक खड़ा है। जबकि दाहिनी ओर का सेवक खण्डित है। प्रस्तुत मूर्ति का बांई ओर का ऊपरी भाग भी टूट गया है और दाहिनी ओर एक मालाधारी गन्धर्व तथा गज ही शेष बचा है। लाल बलुए पत्थर की यह मूर्ति सम्भवतः मध्यप्रदेश में लगभग ९ वीं शती ई. में बनी होगी।

बोस्टन के कला संग्रहालय में उत्तरी भारत में १० वीं सदी ई. में निर्मित एक तीर्थंकर मूर्ति का ऊपरी भाग प्रदर्शित है (नं. ५५५११)। इस दो फीट व तीन इंच ऊंची मूर्ति को स्व. डॉ. आनन्द कुमार स्वामी ने भ्रांति से महावीर की प्रतिमा बताया है जो उचित नहीं है। इसमें उनके केश ऊपर की ओर बंधे हैं तथा जटायें दोनों ओर कन्धों पर पड़ी हैं जिससे स्पष्ट है कि यह आदिनाथ की मूर्ति है। मूर्ति पर्याप्त रूप से खण्डित होने पर भी कला का अनुपम उदाहरण है। मूर्ति के शीर्ष के दोनों ओर बादलों में उड़ते हुए मालाधारी गन्धर्व बने हैं और सबसे ऊपर त्रिछत्र के ऊपर एक दिव्य वादक मृदंग बजाकर आदिनाथ की कैवल्य प्राप्ति पर हर्ष ध्वनि करता प्रदर्शित किया गया है।

इसी संग्रहालय में मैसूर से प्राप्त जिन की ९ वीं १० वीं शती ई. की कांस्य प्रतिमा भी है, जिसमें उनको ध्यान मुद्रा में दिखाया गया है। दक्षिण भारत की अन्य जैन प्रतिमाओं की भांति इस मूर्ति के वक्ष पर श्री वत्स चिह्न का अभाव है। मूर्ति सुडौल है एवं कला की दृष्टि से भी सुन्दर है। इसी से साम्य रखती तीर्थंकर की ध्यान मुद्रा में एक अन्य परन्तु पाषाण मूर्ति जिसे विनिमय में राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली से प्राप्त किया गया था, फिलाडेल्फिया म्यूजियम आफ आर्ट के भारतीय कक्ष में सामने ही प्रदर्शित किया गया है। इसमें भी लांछन नहीं मिलता है यह चौल-कालीन ११ वीं शती ई. की कृति है।

मध्यकाल में राजस्थान और गुजरात में जैन धर्म का काफी प्राबल्य होने के कारण वहां पाषाण एवं धातु की अनगिनत जैन मूर्तियों का भी निर्माण हुआ। ऐसी मूर्तियां अनेक संग्रहालयों के अतिरिक्त अभी भी जैन मन्दिरों में पूजा हेतु प्रतिस्थापित हैं। अमेरिका की अंजलि गैलरी के संग्रह में वि. सं. १११९ व १०५४ ई. की एक कांस्य प्रतिमा में तीर्थंकर को एक ऊंचे सिंहासन पर ध्यान मुद्रा में दिखाया गया है। उनके दोनों ओर एक-एक चंवरधारी सेवक खड़ा है तथा सिंहासन के दोनों ओर यक्ष एवं यक्षी बैठे हैं। सामने पीठिका पर मध्य में धर्म चक्र को घेरे मृग एवं दाहिनी ओर चार व बांई ओर पांच ग्रहों का अंकन है। लांछन अस्पष्ट है। ऊपरी भाग में मालाधारी गन्धर्व तथा त्रिछत्र पर शंख बजाते हुए एक दिव्य गायक बना है। तीर्थंकर की आंखें, श्री वत्स, व सिंहासन के कुछ भाग पर चांदी जड़ी हुई है।

पश्चिमी भारत से प्राप्त वि.सं. १५०८ (१४५१ ई.) की एक मूर्ति श्री और श्रीमती बोव विल्लोधबाई के संग्रह में भी है। परन्तु इसमें भी लांछन का अभाव होने से मूर्ति की ठीक पहचान कर पाना कठिन है। इस पंचतीर्थी मूर्ति में मूल प्रतिमा के दोनों ओर एक-एक तीर्थंकर कायोत्सर्ग मुद्रा में व उनके ऊपर एक अन्य तीर्थंकर ध्यान मुद्रा में दिखाया गया है। अन्य बातें लगभग उपर्युक्त वर्णित मूर्ति जैसी ही हैं। ऐसी ही एक अन्य जिन पंचतीर्थी श्री जेसन बी. ग्रोसमेन के पास भी है। मूर्ति के पीछे उत्कीर्ण लेख से विदित होता है कि इसका निर्माण वि.सं. १५१६ (१४५९ ई.) खुदा हुआ है इसमें भी आंखें एवं श्री वत्स आदि के स्थान पर चांदी का प्रयोग हुआ है।

लास एंजोलिस काउन्टी म्यूजियम आफ आर्ट्स में भगवान विमलनाथ की पंचतीर्थी प्रदर्शित है। मूर्ति के पृष्ठ भाग पर तीर्थंकर का नाम विमलनाथ तथा उसका निर्माण काल वि.सं. १५८७ (१५३० ई.) खुदा हुआ है। विमलनाथ का लांछन शूकर उनके आसन के नीचे बना है तथा सिंहासन के दोनों ओर एक-एक खड़े तीर्थंकर के अतिरिक्त एक-एक चंवरधारी सेवक भी बना है और उनके ऊपर एक-एक अन्य तीर्थंकर ध्यान मुद्रा में निर्मित है। सामने पीठिका पर शांति-देवी के दोनों ओर नवग्रहों का चित्रण है।

अमेरीका में भारत से प्राप्त कुछ जैन देवी अम्बिका की प्रतिमाएं भी पहुंच गई हैं। ऐसी मूर्तियों में संभवतः सबसे प्राचीन प्रतिमा स्टेनदहल गैलरी में सुरक्षित है। उड़ीसा से प्राप्त लगभग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१० वीं शती ई. में निर्मित हुई इस मूर्ति में अम्बिका को एक आमों से लदे वृक्ष के नीचे द्विभंग मुद्रा में खड़े दिखाया गया है। इनके दाहिने हाथ में एक आम्रलुम्बि है और बांए हाथ से वह एक नन्हें बालक को पकड़े हुए है। इनके दाहिनी ओर भी एक बालक अपने दाहिने हाथ में कुछ लिए खड़ा हुआ है। श्री पुराण में अम्बिका के इन दो पुत्रों के नाम सुभंकर तथा प्रेभंकर मिलते हैं। देवी ने सुन्दर मुकुट, हार, कंगन व साड़ी पहिन रखी है। आम्र वृक्ष के ऊपर तीन तीर्थंकरों की ध्यानस्थ मूर्तियां हैं। देवी का वाहन सिंह सामने बैठा दिखाया गया है। यह मूर्ति प्रस्तर कला का श्रेष्ठ उदाहरण है।

उत्तर प्रदेश में झांसी जिले के देवगढ़ नामक स्थान से प्राप्त अम्बिका की एक पाषाण प्रतिमा एवरी ब्रन्डेज संग्रह में भी देखी जा सकती है। त्रिभंग मुद्रा में खड़ी इस मूर्ति में उनके दोनों दाहिने हाथ खण्डित हैं परन्तु पैरों के समीप बने आमों के गुच्छे से प्रतीत होता है कि वह दाहिने निचले हाथ में आम्र लुम्बि पकड़े थी। ऊपर का बांया हाथ भी खण्डित अस्पष्ट पदार्थ पकड़े है और साथ वाले निचले हाथ में वह एक बालक को सम्हाले हुए है। इस मूर्ति में भी आम्रवृक्ष के ऊपर तीन तीर्थंकर ध्यान मुद्रा में विराजमान हैं। इनके अतिरिक्त इनके दोनों ओर भी एक-एक शीर्ष रहित तीर्थंकर की ध्यान मुद्रा में मूर्ति बनी है। इनके पैरों के पास एक-एक सेविका पूर्ण घट लिए दोनों ओर खड़ी हैं। दाहिने पैर के पास इनका द्वितीय पुत्र खड़ा है व बांए पैर के पास इनका वाहन सिंह बैठा हुआ है। देवी ने सुन्दर मुकुट, कोकुर, कुण्डल, हार, माला, साड़ी व पादजालक आदि धारण कर रखे हैं। प्रस्तुत मूर्ति चन्देल कला की ११ वीं शती ई. का उत्कृष्ट उदाहरण है।

पाषाण प्रतिमाओं के अतिरिक्त अम्बिका की दो कांस्य मूर्तियां भी अमेरीका के संग्रहों में सुरक्षित हैं। इनकी प्रथम मूर्ति जो मैसूर, में १० वीं ११ वीं सदी ई. में बनी लगती है एक पद्म पीठ पर दिवभंग मुद्रा में खड़ी है। इनके भी दाहिने हाथ में एक आम्र-लुम्बि है व बांया हाथ अपने पुत्र के शीर्ष के ऊपर रखा है। इनका द्वितीय पुत्र दाहिनी ओर खड़े एक सिंह पर सवार दिखाया गया है। देवी के शीर्ष के ऊपर आम का वृक्ष है, जिस पर बहुत से आम लटकते हुए दिखाए गए हैं। और उसी के ऊपर जिन का ध्यानमुद्रा में अंकन हुआ है। प्रस्तुत मूर्ति कला-संग्रहालय, बोस्टन में प्रदर्शित है।

पश्चिमी भारत में वि.सं. १३६६ (१३०९ ई.) में निर्मित अम्बिका की एक पीतल की मूर्ति को एक ऊंचे आसन पर ललितासन में बैठे दिखाया गया है परन्तु यहां आम्र वृक्ष का अभाव है, यद्यपि यह अपने दाहिने हाथ में आमों का गुच्छा लिए है। बांए हाथ से अपने पुत्र को गोदी में सम्हाले है और इनका अन्य पुत्र इनके दाहिने पैर के समीप खड़ा है। देवी ने करण्ड, मुकुट, कुण्डल, हार व साड़ी पहिन रखी है तथा इनका वाहन सिंह बांए पैर के समीप खड़ा है। सबसे ऊपरी भाग में एक ताख में जिन की ध्यान मुद्रा में मूर्ति बनी है। यह मूर्ति अंजलि गैलेरी में विद्यमान है।

इस लेख में हमने संक्षेप में केवल कुछ जैन मूर्तियों का जो इस समय अमेरीका में विद्यमान हैं, का वर्णन किया है। परन्तु उपर्युक्त वर्णित संग्रहालयों एवं निजी संग्रहों के अतिरिक्त भी अनेक दूसरे संग्रहालयों में जैन मूर्तियां हैं। और उनका भी अध्ययन होना परमावश्यक है। आशा है उन पर भी विद्वान लेख लिखकर सभी को लाभ पहुचायेंगे।

(रामायण की लोकप्रियता....पृष्ठ १३० का शेष)

सीता निःशंक होकर उस प्रज्वलित अग्निकुंड में प्रवेश करती है। प्रवेश करते समय वह कहती है कि हे अग्नि देव! मनसे, वचन से, और काय से जागृत अवस्था में और स्वप्न अवस्था में मेरा पति-भाव रघुनाथ को छोड़ कर अन्य किसी भी पुरुष में हो तो, मुझे जला डालो। अगर मेरा शील सच्चा है तो मेरी रक्षा करो। देवों ने उसी समय अग्नि को पानी बनाया और उसमें एक सिंहासन रख कर उसमें सीता को बैठाया। चारों तरफ जय-जयकार हुवा।

राम ने कहा सीता तुम परीक्षा में सफल हुई, अब मेरे साथ महल में चलो। सीता ने इनकार करते हुवे कहा कि जब आपने मुझे दूर रहने को कहा था तभी मैं संसार से विरक्त हो गई थी। परीक्षा मैंने इसलिये दी कि अगर बिना परीक्षा दिये मैं चली जाती तो लोगों को यह शंका रहती कि सीता पवित्र है या नहीं। अब तो मेरा जीवन जंगल में आत्म-साधना में ही बीतेगा। राम निराश हो कर महल में लौट गये। सीता के शील की चारों-ओर प्रशंसा होने लगी।

रामायण ऐसी अनेक घटनाओं से भरी पड़ी है। इसी कारण से वह लोकप्रिय बनी रही है। उत्तर भारत में रामकथा रामलीला के रूप में बड़े आदर व प्रेम के साथ खेली व देखी जाती है। □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org